हिंसक होती महानगरीय संस्कृति की त्रासदी

हम जितने आधुनिक हो रहे है, हमारे नैतिक मूल्य उतने ही गिरते जा रहे हैं। हमारे महानगर इस गिरावट की हदें पार कर रही हंै। इसकी निष्पत्ति न केवल भयावह बल्कि चिन्ताजनक होती जा रही है। इसका खुलासा इसी बात से हो जाता है कि अकेले दिल्ली में छोटी-छोटी बातों पर हत्या जैसी घटनाओं में काफी बढ़ोत्तरी हुई है। बीते तीन माह के दौरान ही मामूली विवादों पर 127 हत्याएं हो चुकी हैं। ये हत्याएं जिन छोटे-छोटे विवादों एवं कहा-सुनी को लेकर वीभत्स एवं डरावने अंदाज में हुई वे महानगरीय जीवन के हिंसक एवं क्रूर होते जाने की स्थितियों को ही दर्शाता है। ये हत्याएं हमारे समाज की संवेदनशून्यता एवं जड़ होते जाने की त्रासदी को ही उजागर करती है। यहां यह सवाल उठ खड़ा होता है कि हम और आप इतने संवेदनहीन आखिर क्यों हो गए हैं ? क्यों समाज और आस-पड़ोस को लेकर हमारी संवेदनाएं मर गई हैं या मरती जा रही हैं। वसुधैव कुटुंबकम की अपनी प्राचीन सांस्कृतिक परंपरा से हम इतने दूर क्यों चले गए हैं ? इन सवालों का जबाव ढूंढ़ने की अगर हम कोशिश करते हैं तो पाते हैं कि महानगर की भागदौड़ भरी जिंदगी, ज्यादा से ज्यादा पैसा कमाने और भोगवादी जिंदगी जीने की हवस ने हमको न केवल संवेदनशून्य बना दिया है, बल्कि हम लगातार स्वकेंद्रित, हिंसक एवं क्रूर होते जा रहे है।

हाल ही में हुई हिंसा की घटनाओं के कारण एवं स्वरूप को देखकर आपको दु:खद आश्चर्य होगा कि आखिर हम इतने उग्र, बेकाबू एवं संवेदनशून्य कैसे हो गये। विवाद का स्वरूप देखिए, बाल कटवाने के लिए दुकान पर गए एक व्यक्ति के साथ नाई का झगड़ा हो गया। पहले गाली गलौच हुआ और बाद में नाई ने कैंची से उस व्यक्ति की हत्या कर दी। इसी तरह उत्तर-पूर्वी जिले में होली का त्योहार मनाने के दौरान हुए विवाद पर तीन हत्याएं हुईं। तीन दिन पहले तो गोल-गप्पे नहीं खिलाने पर ही खोमचे वाले की हत्या कर दी गई। अब इसे महानगरीय संस्कृति में भागती दौड़ती जिंदगी का तनाव कहें या खत्म होता आपसी प्रेम-भाईचारा, मानवीयता लेकिन कहीं-न-कहीं यह समाज में बढ़ती संवेदनहीनता का ही परिचायक है। आखिर क्या हो गया है लोगों को, सोच ही बदल चुकी है। जो चीज अन्तिम हुआ करती थी वह प्रथम हो गयी। मनुष्य को मार देना। मनुष्य जीवन अमूल्य है। उसे निरपराध मारा जा रहा है। मनुष्य नहीं मर रहा है, मनुष्यता मर रही है। इस दिशा में गंभीरता से विचार और स्थिति में सुधार के लिए प्रयास करने की अत्यंत आवश्यकता है।

महानगर अर्थात् ऊँची-ऊँची इमारतों, बड़े-बड़े कल-कारखानों, दुकानों तथा दौड़ते वाहनों आदि से पूरित घनी आबादी वाले शहर। महानगरीय जीवन अनेक रूपों में मनुष्य के लिए किसी वरदान से कम नहीं है परंतु वहीं दूसरी ओर ये त्रासदी अथवा अभिशाप भी बनते जा रहे हैं, जो अधिक चिन्ता का विषय है। यह कानून व्यवस्था के चरमराने का भी द्योतक है। हर वर्ष महानगरों की जनसंख्या उक्त कारणों से बढ़ती ही जा रही है। महानगरों का गतिशील जीवन भौतिक सुख व अन्य सुविधाओं की चकाचैंध उन्हें आकृष्ट करती है। दिल्ली में पिछले दिनों अफ्रीकी देशों और फिर उत्तरपूर्व प्रदेशों विशेषकर मणिपुर के लोगों के साथ हुई अलग-अलग हिंसक घटनाओं ने लोगों का ध्यान खींचा है। इसने अपने आप से अलग लगने वाले लोगों को लेकर हमारे पूर्वाग्रहों और मन में उनकी रूढ़ छवियों के कारण कथित घृणापूर्ण और हिंसक रवैये पर नए सिरे से बहस छेड़ दी है। क्या यह सब कुछ नस्लवादी है ? नहीं, यह हमारे मन की भीतरी परतों में कहीं छिपी हुई गहरी सामाजिक-मनोवैज्ञानिक समस्या है जिसका समाधान मात्र दंडात्मक या वैधानिक तरीकों से संभव नहीं ? यह प्रश्न भी उठता है कि दिल्ली जैसे शहरों के निवासियों की आत्मछवि हिंसक एवं क्रूर क्यों बनती जा रही है ?

महानगरों में पांव पसार रही हिंसा एवं संवेदनहीनता की संस्कृति के कारणों की पड़ताल करनी होगी। सच तो यह है कि महानगरीय संस्कृति में जीवनशैली ही कुछ ऐसी हो गई है कि सभी को सबकुछ फटाफट चाहिए। हर समय एक हड़बड़ाहट और अजीब-सी जल्दबाजी में रहती है। उसे यह भी करना है, वह भी करना है, सब कुछ करना है और वह भी जल्दी-जल्दी। यह जल्दबाजी ही अनावश्यक तनाव उत्पन्न करती है और यह तनाव फिर तमाम समस्याओं को जन्म देता है। इंसान को अच्छे बुरे तक ख्याल नहीं रहता। नई पीढ़ी को अपनी जीवनशैली में बदलाव करना ही होगा। जीवन में सब कुछ जल्दबाजी में नहीं पाया जा सकता। संयम भी जरूरी है। वैसे भी सफलता और प्राप्ति स्थायी होनी चाहिए। हड़बड़ाहट और तनाव में अक्सर पाने की जगह गंवाना पड़ जाता है। इस संबंध में सभी को ठंडे दिमाग से सोचने की जरूरत है।

रोड रेज दिल्ली वालों के लिए अब कोई नई बात नहीं रह गई है। यहाँ इस तरह की कई वारदातें हो चुकीं जिनमें सड़क पर हुई कोई मामूली बहस खून-खराबे में बदल जाती है। लेकिन इसके पीछे आखिर वजह क्या है ? एक गाड़ी का दूसरी से आगे निकल जाना या किसी वजह से गाड़ी में एक मामूली खरोंच

लग जाना, इतनी बड़ी वजहें कैसे बन जाती हैं कि लोग एक-दूसरे की जान लेने पर उतारू हो जाते हैं। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि इसकी एक बड़ी वजह आधुनिक महानगरीय जीवन है। इस जीवन में आम नागरिक हर जगह समझौता करने के लिए बाध्य होता है। वह खुद अपने आप को असुरक्षित और दमित महसूस करता है।

इसकी वजह से वह दूसरों के प्रति भी असहनशील हो जाता है। जब उसके साथ ऐसी कोई घटना होती है, तो वह उसके भीतर दबे गुस्से के बाहर आने की एक तात्कालिक वजह बन जाती है और वह एक बड़ा कांड कर बैठता है। जहाँ दूसरे पक्ष को वह अपने आप से ज्यादा ताकतवर पाता है, वहाँ उसे खरोंच क्या, बड़ी चोट लगने पर भी अपना गुस्सा पी जाना पड़ता है। यही वजह है कि सिर्फ सड़कों पर ही नहीं, कहीं गली में पार्किंग के लिए, तो कहीं बालकनी को लेकर शुरू हुए छोटे-छोटे झगड़े यहाँ आए दिन गंभीर रूप ले लेते हैं। कुछ समाजशास्त्री मनोवैज्ञानिक इसे शहरी आदमी की कुंठा और अहंकार की मिली-जुली अभिव्यक्ति मानते हैं। वे कहते हैं कि हताशा तो उसके भीतर होती है। अपने प्रति होने वाले व्यवहार से उसके भीतर लगातार गुस्सा जमा हो रहा होता है। लेकिन जब उसे किसी भी वजह से अपनी ताकत का एहसास होता है- वह तेजी से आए हुए धन, हथियार या सामाजिक ताकत के कारण हो सकता है, तो वह उसका प्रदर्शन करने को बेताब हो जाता है। आम शहरी पहले की तुलना में ज्यादा सामथ्र्यवान भी हुआ है। यह अहंकार उसकी नाखुशी को विवेकहीन आचरण में बदल देता है। ऐसा भी प्रतीत होता है कि व्यक्तिगत अवसाद और असुरक्षा बोध भी महानगरीय संस्कृति को धुंधला रहे हैं। आर्थिक और सामाजिक असुरक्षा का बोध इतना गहरा हो जाता है कि वे कुछ भी कर गुजरते हैं।

दिल्ली में बढ़ती हिंसा की घटनाओं को लेकर व्यक्ति और समाज को लेकर कई बड़े सवाल खड़े हो गए हैं। इसका एक बड़ा कारण है संयुक्त परिवारों का बिखरना। इसके कारण महानगरों में न्यूक्लियर फेमिली यानी एकल परिवार की अवधारणा को बल मिलता चला गया है। मैं, मेरी पत्नी और मेरे बच्चे तक सिमटी नई सामाजिक और शहरी अवधारणा ने परिवार के बाकी बचे लोगों को एक-दूसरे अलग-थलग कर दिया है। यह अलगाव भौतिक और भावनात्मक दोनों ही रूपों में दिखाई देता है। इस अलगाव की वजह से परिवार के अन्य लोगों में असुरक्षा की भावना पैदा होती गई। इस असुरक्षा की भावना ने हमें डिप्रेशन या कहें कि अवसाद का शिकार बना दिया है जिससे व्यक्ति मनोरोगों के शिकार बन रहे हैं। ऐसे ही लोगों के द्वारा हिंसा की घटनाओं को अंजाम दिया जा रहा है। हाल ही में हुए एक सर्वेक्षण के मुताबिक दिल्ली में सिर्फ दस फीसदी लोग संयुक्त परिवारों में रहते हैं, जबकि 76 फीसदी लोग एकल परिवार का हिस्सा हैं। एकाकीपन का खौफ बहुत खतरनाक होता है। अपने परिवार से अलग होने या रहने की एक अलग अनुभूति और प्रभाव होता है जिसे हर कोई व्यक्त नहीं कर पाता है। इस तरह अंदर ही अंदर लगातार घुटते रहने और अपनी भावनाओं को दबाते चले जाने के कारण हमारे महानगरीय जीवन में विकृत मानसिकता की गिरफ्त में आने का खतरा बढ़ जाता है।

अभी कुछ दिनों पहले इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च के तीन महानगरों में कराए गए सर्वेक्षण का नतीजा भी बेहद हैरान करने वाला आया है। आईसीएमआर के उस सर्वेक्षण के मुताबिक दिल्ली में रहने वाले आठ प्रतिशत लोग तनाव के शिकार हैं। सिर्फ दिल्ली में ही 2001 के मुकाबले 2010 में मानसिक रोगियों की संख्या में छह फीसदी का इजाफा हुआ है। यहां हमें यह याद रखना होगा कि इन दस वर्षो में देश ने आधुनिकता का दामन कसकर पकड़ा और उन्मुक्त अर्थव्यवस्था ने अपने पांव पसारे।

इसके अलावा अगर हम इंडियन साइकेट्रिक सोसाइटी की सालाना रिपोर्ट पर गौर करें तो इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि एकांत अवसाद का प्रमुख कारण है और तकरीबन पचपन फीसदी लोगों की सामाजिक भागीदारी नगण्य है। इसमें ज्यादातर वे लोग हैं जो अन्य शहरों या सूबों से नौकरी की तलाश में यहां आए और अपना कोई समाज नहीं बना पाए। सामाजिक सहभागिता कम होने की वजह से लोग अवसाद के शिकार होते चले गए।

मां-बाप को उम्र के उस मुकाम पर जब अपने औलाद के साथ की सबसे ज्यादा जरूरत होती है तभी वह उनसे अलग हो जाते हैं। इस अलगाव से जो मानसिक तनाव या फिर बच्चों की संवेदनहीनता से एकाकीपन का गहरा अहसास होता है वह उन्हें अंदर से तोड़ देता है जिसकी भरपाई ताउम्र नहीं हो पाता है। दिल्ली की ताजा हिंसक घटनाओं ने हमारे समाज को एक बार फिर से झकझोर दिया है और यह सोचने को मजबूर कर दिया है कि महानगरों की इस भागदौड़ भरी जिंदगी में एकाकीपन के कारण बढ़ रहे अवसाद या डिप्रेशन को कैसे रोका जाए और कैसे बढ़ती हिंसक घटनाओं पर नियंत्रण स्थापित किया जाये।

आज जबकि हमारे देश में नया भारत एवं नए मनुष्य निर्मित करने की की बात हो रही है, महानगरों में बढ़ती हिंसा एवं विकृत होती मानसिकता की त्रासदी से उबारना भी जरूरी है। जब मानवीय उदात्तताएं हाशिए पर जा रही हैं तब अहिंसक मूल्यों पर आधारित एक स्वस्थ महानगरों की रूपरेखा खड़ी करने की आवश्यकता है।

संपर्क
(ललित गर्ग)
ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट
25, आई0पी0 एक्सटेंशन, पटपड़गंज,
दिल्ली-92, फोन : 22727486